

श्याम सुंदर अग्रवाल व कंपनी

बनाम

भारत संघ

9 जनवरी 1996

(जी.एन.रे व जी.टी.नानावटी जे.जे.)

मध्यस्थता अधिनियम, 1940

धारा 39-अपीलीय आदेश पारित किया गया-ऐसे आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण अनुज्ञेय -माना गया कि अधिनियम में ऐसा स्पष्ट प्रावधान नहीं है जो अपीलीय आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण को रोकता हो।

खासी व जेनिटिया हिल्स, 1937 के न्याय और पुलिस प्रशासन नियम

नियम 36-ए-मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण अनुज्ञेय माना गया--नियम 36-ए के तहत पुनरीक्षण की धारा 115 सिविल प्रक्रिया संहिता की अनुकूलता में प्रयोग किया जाना चाहिए-गैर आदिवासियों पर नियम लागू होगा-सहायक उपायुक्त व उपायुक्त को सिविल न्यायालय की शक्तियां होना माना गया है।

दीवानी प्रक्रिया संहिता 1908:

धारा 115 -पुनरीक्षण-विशेष कानून -अंतिमता का प्रावधान-उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति को शून्य प्रभावी नहीं करता है।

अपीलकर्ता ने प्रतिवादी के साथ एक अनुबंध किया। पक्षकारों के मध्य विवाद हुआ और मामले को एकमात्र मध्यस्थ के पास भेजा गया जिसने अपीलार्थी के पक्ष में 6,72,645.56 रुपये की राशि का पंचाट पारित किया गया। सहायक उपायुक्त शिलांग ने पंचाट को न्यायालय का नियम बनाया व प्रत्यर्थी की आपत्ति को मध्यस्थता अधिनियम, 1940 की धारा 30 के तहत खारिज किया। प्रत्यर्थी की अपील उपायुक्त द्वारा धारा 39 के तहत खारिज की गई। खासी व जेनेटिया हिल्स 1937 के न्याय व पुलिस प्रशासन नियमों के नियम 36 ए के अंतर्गत पुनरीक्षण याचिका दायर की गई तथा एकल न्यायाधीश ने पुनरीक्षण प्रकरण को खंडपीठ को पुनरीक्षण की पोषणीयता के बिंदु के निस्तारण हेतु खंडपीठ को संदर्भित किया। उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने संदर्भ को उत्तरित करते हुए पुनरीक्षण को पोषणीय माना व अभिनिर्धारित किया कि (i) मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत पारित अपीलीय आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण पोषणीय है। (ii) मध्यस्थता अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो अपीलीय आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार पर प्रतिबंध लगाता हो। इस निष्कर्ष पर पहुंचने में

खंडपीठ ने एल चरणदास बनाम एल गुरशरणदास एआईआर 1945 इलाहाबाद 146 के इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय तथा लालचंद बनाम देवराज एआईआर 1951 पैप्सू 115 में पैप्सू उच्च न्यायालय के निर्णय पर आश्रय किया तथा यह माना कि भारत संघ बनाम डीएस नरूला व कंपनी सिविल रिविजन नंबर 1985 का 33(एच) (1991) जीएलजे 400 के प्रकरण में उक्त उच्च न्यायालय की एकल पीठ के द्वारा प्रकट किया गया विपरीत मत गलत था।

इस न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी की ओर से यह तर्क दिया गया कि; पद्द खासी व जेनेटिया हिल्स के न्याय व पुलिस प्रशासन नियम 1937 का नियम 36 ए केवल खासी व जेनेटिया जनजाति के मध्य उत्पन्न विवाद पर ही लागू होता है। यह क्षेत्र के गैर जनजाति लोगों के मध्य उत्पन्न हुए विवादों पर लागू नहीं होता है। अतः नियम 36 ए के तहत दायर पुनरीक्षण याचिका पोषणीय नहीं है (i) मध्यस्थता अधिनियम अपीलीय आदेश के पुनरीक्षण के प्रावधान नहीं करता है। (ii) यह मानते हुए कि उच्च न्यायालय को धारा 115 सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के तहत किसी अधिनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आदेश के पुनरीक्षण की शक्ति प्राप्त है, परंतु ऐसी कोई पुनरीक्षण याचिका दायर नहीं की गई थी और पुनरीक्षण नियम 36 ए के तहत दायर याचिका मध्यस्थता अधिनियम के प्रयोजन से भिन्न है। (iv) सहायक उपायुक्त और उपायुक्त को

मध्यस्थता पंचाट पर विचार कर पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने की शक्ति हो सकती है तथा अपील सुनने की शक्ति हो सकती है परंतु उन्हें धारा 115 दीवानी प्रक्रिया संहिता के तहत दीवानी न्यायालय तथा मध्यस्थता अधिनियम की धारा 2(सी) में परिभाषित न्यायालय नहीं माना जा सकता है।

इस न्यायालय ने अपील को खारिज करते हुए

अभिनिर्धारित- उच्च न्यायालय के समक्ष मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण याचिका पोषणीय है। अधिनियम में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो अधिनियम की धारा 39 में पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध दायर पुनरीक्षण याचिका पर प्रतिबंध लगाता हो। अधिनियम एक विशेष कानून है जो केवल इसमें अधिनियमित होने वाले प्रकरणों को नियमित व नियंत्रित करता है। ऐसे में इस विशिष्ट विधि का संप्रयोग उसी प्रकार होना चाहिए जैसा अधिनियम द्वारा उपबंधित है। अतः संहिता अथवा किसी अन्य विधि के तहत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण क्षेत्राधिकारिता मध्यस्थता अधिनियम में ऐसे किसी उपबंध के अभाव में जो उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति को प्रतिबंधित करता हो, मध्यस्थता अधिनियम के अधीन नहीं होगी। बशर्तें पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग मध्यस्थता अधिनियम के किसी उपबंध के प्रभाव को कम ना करता हो (260-सी-डी)।

भारत संघ बनाम मोहिन्द्र सप्लाई कंपनी एआईआर (1962) एससी 256; छगनलाल बनाम वि. नगर निगर, इंदौर (1977) 2 एससी 409 आर मेडील व कंपनी बनाम गौरीशंकर शारदा, (1991) 2 एससीसी 548, संदर्भित

एल चरण दास बनाम एल गुर शरण दास (1945) सभी। 146 लालचंद बनाम देवराज एआईआर (1951) पेप्सू 115 स्वीकृत

भारत संघ बनाम डी एस व नरूला व कंपनी, सिविल रिवीजन नंबर 33 (एच) ऑफ (1985) (1991 जीएलजे 400), अस्वीकृत

भले ही कोई विशेष कानून स्पष्ट रूप से उक्त कानून के तहत पारित अपीलीय आदेश को अंतिमता प्रदान करता हो, परंतु अंतिमता का ऐसा प्रावधान सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के अंतर्गत उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण शक्ति को समाप्त नहीं करता है। मध्यस्थता अधिनियम में ऐसा कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है जो उक्त अधिनियम की धारा 39 के तहत पारित अपीलीय आदेश को अंतिमता प्रदान करता हो। धारा 39 के तहत पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध केवल द्वितीय अपील ही धारा 39(2) के तहत प्रतिबंधित है। उच्च न्यायालय के आक्षेपित आदेश जिसमें नियमों के नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता मानी गई थी, सही है एवं उक्त आदेश में हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता नहीं है। (260-जी-एचय 261-ए)

हरिशंकर बनाम राओ गिरधारीलाल (1962) सप्ल. 1 एससीआर 933, संदर्भित

3. अपीलकर्ता ने पंचाट को सहायक उपायुक्त के न्यायालय में पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने हेतु दायर किया तथा मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत उपायुक्त के अपील सुनने के क्षेत्राधिकार को स्वीकार किया। उपरोक्त परिस्थितियों में प्रतिवादी द्वारा इस प्रक्रम पर नियमों के नियम 36ए की गैर जनजातीय लोगों पर गैर प्रयोज्यता का तर्क स्वीकार योग्य नहीं है।

4. सहायक उपायुक्त शिलांग व उपायुक्त शिलांग को मेघालय के कुछ हिस्सों में दीवानी न्यायालयों के समरूप क्षेत्राधिकारिता प्राप्त है। 1972 के मेघालय अधिनियम नंबर 6 के अंतर्गत नियमों को संपूर्ण संयुक्त खासी व जनिटिया हिल्स जिलों में लागू किया गया है। इसलिए अपीलकर्ता ने मध्यस्थता पंचाट को सहायक उपायुक्त के न्यायालय में प्रस्तुत किया तथा पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने का आदेश प्राप्त किया। प्रतिवादी-भारत संघ ने मध्यस्थता अधिनियम के नियम 39 के अंतर्गत सहायक उपायुक्त के समक्ष अपील प्रस्तुत करते हुए उसे अपीलीय दीवानी न्यायालय स्वीकार किया। अभिलेख पर ऐसी कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं की गई है जो यह दर्शित करती हो कि सहायक उपायुक्त अथवा उपायुक्त को क्षेत्रीय सीमाओं के सामान्य दीवानी विवादों के निर्णय के संबंध में दीवानी

न्यायालय के अधिकार प्राप्त हैं परंतु उन्हें केवल विशेष जनजाति व्यक्तियों के विशेष श्रेणी के दीवानी विवादों को निर्णीत करने का ही अधिकार है। उपरोक्त परिस्थितियों में ऐसे दीवानी न्यायालय जो उच्च न्यायालय के अधीन है व विशेष विधि के तहत निर्मित किया गया है, के द्वारा पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध धारा 115 सीपीसी के अंतर्गत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण क्षेत्राधिकारिता समाप्त नहीं हो जाती है।

5. अपीलकर्ता भारत संघ ने उच्च न्यायालय की एकल पीठ के समक्ष नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण याचिका दायर की क्योंकि सहायक उपायुक्त के अपीलीय आदेश के विरुद्ध नियमों में अपील का प्रावधान नहीं है। भले ही सहायक उपायुक्त के द्वारा पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध नियमों के अंतर्गत अपील का प्रावधान है, ऐसी द्वितीय अपील मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39(2) के अंतर्गत प्रतिबंधित होने से अक्षम होगी। ऐसी परिस्थितियों में नियम 36 ए के अंतर्गत पुनरीक्षण याचिका को सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 की अनुरूपता में विचारित किया जाना चाहिए। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश पर आक्रमित करने हेतु नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्तियों की सीमित प्रयोज्यता को पढ़ा जाना चाहिए, अन्यथा नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्ति प्रतिरोधी भेदभाव को अवसर देगी। ऐसे मामले में उच्च न्यायालय के नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग सिविल

प्रक्रिया संहिता के तहत पुनरीक्षण शक्ति के अनुरूप किया जाना चाहिए।

सिविल अपील की क्षेत्राधिकारिता-सिविल अपील नंबर 1536/1996

1989 के सीआर नंबर 74 (एसएच) में असम उच्च न्यायालय के निर्णय व आदेश दिनांकित 08.10.1991 के विरुद्ध

एचएल टिक्कू, कैलाश अशदेव व सुश्री अपर्णा भट्ट अपीलार्थी की ओर से

वीआर रेड्डी, अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल, सुश्री इंदिरा साहनी, सुश्री सुषमा सुरी (एनपी) प्रतिवादी की ओर से

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति जीएन रे द्वारा दिया गया।

अनुमति दी गई।

उभयपक्षों के अधिवक्ताओं को सुना गया। यह अपील गुवाहाटी उच्च न्यायालय की डिविजन बेंच के द्वारा दिनांक 08.10.1991 को 1989 की सिविल निगरानी प्रकरण संख्या 74(एस0 एच0) में पारित निर्णय के विरुद्ध प्रस्तुत की गई। उपरोक्त निर्णय उच्च न्यायालय के डिविजन बेंच द्वारा गुवाहाटी हाईकोर्ट के विद्वान एकल न्यायाधीश के द्वारा उक्त सिविल प्रकरण संख्या-74(एस0 एच0) में दिए गये संदर्भ में पारित किया था। भारत संघ बनाम डी0एस0 नरुला व कंपनी की सिविल निगरानी



संख्या-33 एच0-1991 जी0 एल0 जे0-400 में गुवाहाटी उच्च न्यायालय की एकलपीठ के द्वारा पारित निर्णय से असहमत होते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह कहा कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा-39 के अन्तर्गत अपीलीय न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध निगरानी पोषणीय नहीं है तथा विद्वान अतिरिक्त उपायुक्त पूर्वी खाँसी नील शिलांग द्वारा 28.03.1968 को पारित अपीलीय आदेश, जो सहायक उपायुक्त शिलांग द्वारा पारित आदेश दिनांकित 21.07.1984 जिसमें मध्यस्थता अधिनियम की धारा-30 के तहत की गई आपतियों को खारिज करते हुए पँचाट को पारित कर उसे न्यायालय का नियम बनाया गया था, से उद्धवित हुआ था, के विरुद्ध खाँसी व जयन्तियाँ हील्स-1937 के न्याय प्रशासन व पुलिस प्रशासन नियमों के नियम-36 के अन्तर्गत प्रस्तुत की गई पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता तय करने हेतु यह निगरानी प्रकरण डिविजन बेंच को संदर्भित कर दिया।

प्रत्यर्थी द्वारा अपीलार्थी को सिलचर के निकट काशिपुर की कुछ जगहों के समतलीकरण का अनुबंध दिया था पक्षकारों के मध्य अपीलार्थी द्वारा कार्य के दावे को लेकर हुए विवाद को दृष्टिगत रखते हुए न्यायालय आदेश द्वारा विवाद को एकल मध्यस्थ मुख्य अभियन्ता, रक्षा मुख्यालय नई दिल्ली को भेजा गया। एकल मध्यस्थ ने पक्षकारों को सुनने के बाद गैरभाषी पँचाट अपीलार्थी के पक्ष में 28.07.1982 को 6,72,645.56/-रूपये

की राशि तथा पंचाट पारित होने के दिनांक से प्राप्ति तक 10 प्रतिशत ब्याज के साथ दिये जाने का पारित किया।

11.08.1982 को अपीलार्थी ने सहायक उपायुक्त शिलांग के न्यायालय में पंचाट दायर किया तथा प्रत्यर्थी ने मध्यस्थता अधिनियम की धारा-30 के अंतर्गत आपत्ति दायर की, अपीलार्थी ने अपना प्रतिउत्तर दायर किया। विद्वान सहायक उपायुक्त ने आपत्ति को खारिज कर पंचाट को न्यायालय का नियम बनाया।

इसके उपरांत प्रत्यर्थी ने सहायक उपायुक्त के निर्णय के विरुद्ध मध्यस्थता अधिनियम धारा-39 के अंतर्गत विद्वान उपायुक्त शिलांग के समक्ष अपील दायर की तथा विद्वान उपायुक्त ने उक्त अपील को खारिज कर दिया उक्त पंचाट के अनुक्रम में एक डिक्री पारित की गई।

प्रत्यर्थी, द्वारा उक्त अपीलिय आदेश को चुनौती देते हुए गुवाहाटी उच्च न्यायालय की एकल पीठ के समक्ष खॉसी व जयन्तियाँ हील्स-1937 के न्याय प्रशासन व पुलिस प्रशासन नियमों के नियम-36 के अन्तर्गत पुनरीक्षण याचिका दायर की।

विद्वान एकलपीठ का यह मत था कि नियम 36 ए के तहत उक्त पुनरीक्षण याचिका भारत संघ बनाम डी0एस0 नरूला व कंपनी के मामले में उक्त उच्च न्यायालय की एक अन्य एकलपीठ द्वारा व्यक्त विपरीत

दृष्टिकोण से असहमत होने के कारण पोषणीय थी तथा प्रस्तुत निगरानी याचिका की पोषणीयता के बिन्दु के निस्तारण हेतु गुवाहाटी उच्च न्यायालय की खण्डपीठ को पुनरीक्षण प्रकरण संदर्भित किया।

आक्षेपित निर्णय द्वारा खण्डपीठ ने यह माना कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा-39 के तहत, अपीलीय निर्णय व आदेश के विरुद्ध द्वितीय अपील स्पष्ट रूप से वर्जित है। मध्यस्थता अधिनियम ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो अपीलीय आदेश के खिलाफ उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार पर प्रतिबंध लगाता हो। खंडपीठ द्वारा यह माना गया कि अपीलीय आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय को पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार प्रदत्त किये जाने का कोई प्रावधान नहीं है परंतु मध्यस्थता अधिनियम की धारा-2 सी न्यायालय को परिभाषित किया है, मध्यस्थता अधिनियम की धारा-39 के अंतर्गत अपीलीय न्यायालय के समक्ष न्यायिक कार्यवाही है व न्यायाधीश धारा-39 के अंतर्गत शक्तियों का प्रयोग एक न्यायिक अधिकारी के रूप में करता है। धारा-115 सिविल प्रक्रिया संहिता उच्च न्यायालय को उसके अधीनस्थ न्यायालय के ऐसे निर्णय जो अपीलीय नहीं है, के संबंध में पुनरीक्षण शक्तियां प्रदान करती है। बशर्ते की धारा 115 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत तीनों खंडों में से कोई भी पुरा हो। यह प्रतीत होता है कि गुवाहाटी उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने एल चरणदास बनाम एल गुरशरणदास एआईआर 1945 इलाहाबाद 146 के इलाहाबाद उच्च

न्यायालय के निर्णय तथा लालचंद बनाम देवराज एआईआर 1951 पैप्सू 115 में पैप्सू उच्च न्यायालय के निर्णय पर आश्रय करते हुए तथा यह मानते हुए कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण उच्च न्यायालय के समक्ष पोषणीय है, गुवाहाटी उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने संदर्भ को उत्तरित कर गुवाहाटी उच्च न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत पुनरीक्षण याचिका की पोषणयिता के पक्ष में संदर्भ को उत्तरित कर यह प्रकट किया कि डीएस नरूला व कंपनी के प्रकरण में उक्त उच्च न्यायालय की एकल पीठ के द्वारा प्रकट किया गया विपरीत मत गलत था। खंडपीठ ने यह निर्देश दिया कि पुनरीक्षण प्रकरण सुनवाई योग्य होने के कारण उच्च न्यायालय की उचित एकल पीठ द्वारा गुणावगुण पर निस्तारित किया जाना चाहिए।

अपील के प्रतिद्वंद्वी पक्षकारों के तर्कों की विवेचना करने के उद्देशों के लिए मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39,40,41 और 47 के प्रावधानों का उल्लेख करना उचित होगा। अपील योग्य आदेश-इस अधिनियम के तहत पारित निम्नलिखित आदेश की अपील और किसी अन्य से नहीं आदेश पारित करने वाले न्यायालय की मूल डिक्री से अपील सुनने के लिए कानून द्वारा अधिकृत न्यायालय में की जायेगी। एक आदेश:

- (1) किसी मध्यस्थता का स्थान लेना
- (2) किसी विशेष मामले के संदर्भ में बताए गए पंचाट पर

(3) किसी पंचाट को संशोधित या सही करना

(4) मध्यस्थता समझौते को दाखिल करने या ना करने से इन्कार करना

(5) जहां मध्यस्थता समझौता हो वहां कानूनी कार्यवाही पर रोक लगाना या रोक से इनकार करना

(6) किसी पंचाट को रद्द करना या रद्द करने से इनकार करना

(2) इस धारा के तहत अपील में पारित आदेश के खिलाफ कोई दूसरी अपील नहीं की जाएगी, लेकिन इस धारा में कुछ भी सर्वोच्च न्यायालय में अपील करने के किसी अधिकार को प्रभावित नहीं करेगा या शून्य नहीं करेगा।”

“40...लघु वाद न्यायालय को उसके समक्ष मुकदमे में मध्यस्थता को छोड़कर मध्यस्थता पर अधिकार क्षेत्र नहीं होगा -धारा 2 के तहत किए गए आवेदन को छोड़कर एक लघु वाद न्यायालय के पास किसी मध्यस्थता कार्यवाही या इससे उत्पन्न होने वाले किसी आवेदन पर कोई अधिकारक्षेत्र नहीं होगा।”

“41. न्यायालय की प्रक्रिया और शक्तियां इस अधिनियम के प्रावधान और उसके तहत बनाये गये नियम के अधीन

(ए) सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 के प्रावधान, इस अधिनियम के तहत न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियों और सभी अपीलों के लिए लागू होंगे, और

(बी) मध्यस्थता की कार्यवाही के प्रयोजन और उसके संबंध में, न्यायालय को दूसरी अनुसूची में निर्धारित किसी भी मामले में आदेश देने की समान शक्ति है जैसा कि न्यायालय के समक्ष किसी भी कार्यवाही का उद्देश्य और संबंध के लिए है,

बशर्ते कि खंड (बी) की कोई भी बात, मध्यस्थ या अंपायर में निहित ऐसे किसी भी मामले के संबंध में आदेश करने की शक्ति पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली न होगी।”

“47. अधिनियम सभी मध्यस्थताओं पर लागू होगा। धारा 46 के प्रावधानों के अधीन और जहां अन्यथा किसी कानून द्वारा प्रदान किया गया है, को छोड़कर इस अधिनियम के प्रावधान सभी मध्यस्थताएं और उनके अधीन सभी कार्यवाहियों पर लागू होंगे:

बशर्ते कि अन्यथा प्राप्त मध्यस्थता पंचाट को सभी इच्छुक पक्षों की सहमति से ऐसे किसी भी न्यायालय जिसके समक्ष मुकदमा लंबित है, के द्वारा ऐसे मुकदमें के समझौते या समायोजन के समान समझा जा सकेगा।

इस स्तर पर खासी और जनिटिया हिल्स में न्याय और पुलिस प्रशासन नियम 1937 के प्रासंगिक प्रावधानों का उल्लेख करना भी उचित होगा (इसके बाद नियमों के रूप में संदर्भित)े। उक्त नियम 1874 के अनुसूचित जिला अधिनियम-14 की धारा-6 द्वारा प्रदत्त शक्तियों के तहत सरकार द्वारा प्रख्यापित किए जाने के बाद दिनांक 29 मार्च, 1937 की अधिसूचना संख्या 2618-ए0पी0 के तहत प्रकाशित किए गए थे। यह नियम सम्पूर्ण संयुक्त खासी जनिशिया हिल्स जिलो में लागू है, उन क्षेत्रो को छोडकर जिन्हे भारतीय संविधान के लागू होने से पूर्व खासी राज्यों के रूप में जाना जाता था। नियमो के अध्याय के अंतर्गत बनाये गये दीवानो नियमो का नियम 31 उपायुक्त व उसके सहायकों के मूल अधिकारी क्षेत्र के सम्बन्ध में उपबंध करता है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस पर कोई विवाद नही है कि सहायक उपायुक्त स्वयं के समक्ष प्रस्तुत न्यायालय के नियम बनाने के उद्देश्य से प्रस्तुत माध्यस्थम पंचाट को सुन सकता है। इस पर भी कोई विवाद नही है कि कोई पक्षकार माध्यस्थत पंचाट को न्यायालय नियम बनाने के सहायक उपायुक्त के आदेश के विरुद्ध आयुक्त के समक्ष अपील प्रस्तुत कर सकते हैं।

नियमो के नियम 31 व 36 ए निम्नलिखित है:-

“31 उपायुक्त और उनके सहायको द्वारा मूल क्षेत्राधिकार का प्रयोग-  
उपायुक्त व उनके सहायक आमतौर पर सरदारो या डोलोई या अन्य

विधिवत मान्यता प्राप्त ग्राम प्राधिकारियों द्वारा विचारणीय मुकदमों को सुनवाई नहीं करेंगे। परंतु(यदि वे सही समझे) तो उन्हें ऐसा करने का विवेकाधिकार है व जिन मुकदमों की सुनवाई इन नियमों के तहत गांव के अधिकारी नहीं कर सकते, उनकी सुनवाई उपायुक्त या उनके सहायको द्वारा की जानी चाहिये। उपायुक्त व उनके सहायको द्वारा विचारित किये गये सख्ख मुकदमों का एक रजिस्टर ऐसे प्रारूप में जैसा उच्च न्यायालय निर्देशित पोषित किया जाएगा।”

“36 ए अपील और पुनरीक्षण-उच्च न्यायालय व उपायुक्त आवेदन पर या अन्यथा, अपने अधीनस्थ किसी भी अधिकारी द्वारा निर्णीत किये गये किसी भी मामले की कार्यवाही को तलब कर सकता है व ऐसा आदेश पारित कर सकता है जैसा व उचित समझे।

सहायक के निर्णय के खिलाफ अपीलीय न्यायालय सहायक उपायुक्त का होगा। यदि मुकदमे का मूल्य पांच सौ रूपये या उससे अधिक है, या मुकदमें में आदिवासी अधिकार व रीति अथवा अचल सम्पत्ति के स्वामित्व अथवा कब्जे के अधिकार का प्रश्न शामिल है, तो उच्च न्यायालय उपायुक्त के मूल निर्णय के विरुद्ध अपीलीय न्यायालय होगा”

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क प्रस्तुत किया कि नियम केवल खासी या जनितिया के विवादों पर लागू होते हैं। वे क्षेत्र के गैर आदिवासी लोगों के बीच विवादों को अधिनियमित नहीं करते हैं। हालांकि



हमें ऐसा प्रतीत होता है कि नियम, प्राधिकारियों जैसे सरदारों और कोलोइस और अन्य मुख्य ग्राम प्राधिकारियों द्वारा मामलों कुछ श्रेणियों व दीवानी मामलों की सुनवाई का प्रावधान करते हैं, जिन्हें उपायुक्त राशि के अनुसार सीमा के बिना परंतु नियम 26 के खण्ड (अ)(ब) में उल्लेखित आरक्षणों की संख्या समद द्वारा अपने हस्ताक्षर के तहत मामले की सुनवाई के लिये सक्षम के रूप में मान्यता दे सकते हैं। नियम 32 उन सभी प्रकरणों में उपायुक्त या उनके सहायक द्वारा दीवानी विवादों को पंचायत को संदर्भित करने का प्रावधान करता है जिनमें पक्षकार पहाड़ियों के मूल निवासी हैं। नियम 33 में ग्राम प्राधिकारियों के निर्णय की अपील उपायुक्त या सहायक उपायुक्त के समक्ष करने का प्रावधान करता है। (जोर दिया गया)

नियम 36 ए उच्च न्यायालय व उपायुक्त, जैसा भी प्रकरण हो, के समक्ष अपील व पुनरीक्षण का प्रावधान करता है। नियम 38 ए सह प्रावधानित करता है कि सहायक उपायुक्त के निर्णय की अपील का न्यायालय उपायुक्त होगा। यदि मुकदमे का मूल्य पांच सौ रुपये या उससे अधिक है या यदि मुकदमे में आदिवासी अधिकार या रीति रिवाज या अचल सम्पत्ति के अधिकार या बक्जे का प्रश्न शामिल है तो उच्च न्यायालय उपायुक्त के मूल निर्णय के विरुद्ध अपील की अदालत होगी। (जोर दिया गया)

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क कि नियम खासी या जेनिटिया नाम जनजातियों के बीच विवादों पर लागू होता है, स्वीकार नहीं किया जा सकता है। ऐसा प्रतीत नहीं होता कि ऐसा विवाद उच्च न्यायालय के समक्ष उठाया गया है। इसके अलावा, यह बताने के लिए हमारे सामने कोई सामग्री नहीं रखी गई है कि नियम केवल खासी या जेनिटिया जनजातियों पर लागू होते हैं। नागरिक न्याय के प्रशासन से संबंधित नियमों के अध्याय चार के संदर्भ में हमें यह प्रतीत होता है कि जिस क्षेत्र में नियम लागू किए गए हैं, उसके संबंध में नागरिक विवादों की सुनवाई के लिए एक विशेष मंच बनाया गया है। नियम 32 में सभी विवादों को ग्राम पंचायतों को संदर्भित करने का विशिष्ट प्रावधान, जिसमें पक्ष पहाड़ी के स्वदेशी निवासी हैं, केवल यह दर्शाता है कि ऐसा संदर्भ पहाड़ी के सभी मूल निवासियों के संबंध में किया जाना है, न कि केवल खासी के सदस्यों के संबंध में। या जेनिटिया जनजातियाँ। इसी प्रकार, नियम 36 ए में, यदि मुकदमे में आदिवासी अधिकारों और रीति-रिवाजों का प्रश्न शामिल है, तो उच्च न्यायालय को उपायुक्त के मूल निर्णय के खिलाफ अपील की अदालत बनाया गया है। इस तरह के प्रावधान से संकेत मिलता है कि उपायुक्त का मूल निर्णय अन्य मामलों और खासी और जेनिटिया आदिवासियों के अलावा अन्य व्यक्तियों के संबंध में हो सकता है।

अपीलकर्ता के पंचाट को सहायक उपायुक्त के न्यायालय में पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने हेतु प्रस्तुत किया व मध्यस्था अधिनियम को धारा 39 के तहत उपायुक्त के अपील विचारित करने के अधिकार को भी स्वीकार किया। इन परिस्थितियों में, प्रतिवादी द्वारा नियमों के नियम 36 ए की अनुपलब्धता को तर्क जो इस प्रक्रम पर उठाया गया, स्वीकार किया जाना उचित नहीं है।

यह तर्क बहुत दृढ़ता से दिया गया कि मध्यस्थता अधिनियम अपीलीय आदेश की निगरानी प्रावधानित नहीं करता है। मध्यस्थता अधिनियम का उद्देश्य मध्यस्थता समझौते के पक्षों के मध्य विवाद के संबंध में दीवानी न्यायालय में समय लेने वाली प्रक्रिया से बचकर कम समय के भीतर पक्षकारों द्वारा समझौते शर्तों के अनुसार चुने जाने वाले न्यायाधीश अथवा जहां पक्षकार मध्यस्थ चुनने में विफल रहते हैं वहां किये गये मध्यस्थ द्वारा निर्णय प्राप्त करना है। मध्यस्थता कार्यवाही की अंतिमता को शीघ्रता प्रदान करने हेतु, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 स्पष्ट रूप से इंगित करती है कि मध्यस्था अधिनियम के तहत पिरित ऐसे आदेशों के खिलाफ केवल एक ही अपील की जाएगी जैसा कि धारा 39 में दर्शाया गया है। धारा 39 (2) विशेष रूप से इंगित करती है कि धारा 39 के तहत की गई अपील पर पारित आदेश के खिलाफ कोई दूसरी अपील नहीं होगी। यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यद्यपि लेटर्स पेटेंट के तहत,

उच्च न्यायालय की एकल पीठ के फैसले के खिलाफ खण्ड पीठ में अपील की जा सकती है, परंतु इस न्यायालय द्वारा स्पष्ट रूप से यह माना गया कि मध्यस्थता अधिनियम की योजना के तहत, अपीलीय आदेश की द्वितिय अपील धारा 39 के तहत प्रतिबंधित है व धारा अपील, द्वितिय अपील के प्रतिबंध का अपवाद नहीं है। इस तर्क के लिये, इस न्यायालय के भारत संघ बनाम मोहिन्दर सप्लाई कम्पनी एआईआर (1962) सुप्रीम कोर्ट 256 के निर्णय को संदर्भित किया गया।

अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने तर्क प्रस्तुत किया कि भले ही यह मान लिया जाए कि उच्च न्यायालय को धारा 115 सीपीसी के तहत अपने अधीनस्थ न्यायालय द्वारा पारित आदेश को धारा 1151 खंड (ए) से (सी) के निर्दिष्ट दायरे के भीतर पुनरीक्षण करने का अधिकार प्राप्त है, धारा 115 सीपीसी के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसी कोई पुनरीक्षण याचिका प्रस्तुत नहीं की गई है, परंतु मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश की शुद्धता पर सवाल उठाने के उद्देश्य से नियमों के नियम 36 ए के तहत एक पुनरीक्षण याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की गई है। नियम 36 ए के तहत ऐसी पुनरीक्षण याचिका मध्यस्थता अधिनियम की योजना के प्रतिकूल है।

अपीलकर्ता के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि नियम 36 ए उपायुक्त के मूल या अपीलीय निर्णय के संशोधन पर विचार करता है

क्योंकि नियमों के तहत, उपायुक्त के अपीलीय निर्णय के खिलाफ उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटाने का कोई प्रावधान नहीं है। वास्तव में, उच्च न्यायालय के समक्ष अपील उपायुक्त के मूल निर्णय के खिलाफ करने पर विचार किया जाता है (प) यदि मुकदमे का मूल्य पांच सौ रुपये या उससे अधिक है, या (पप) यदि मुकदमे में मुकदमे के अधिकार या कस्टम का प्रश्न शामिल है या (पपप) यदि अचल संपत्ति का अधिकार और कब्जा शामिल है। चूंकि नियम 36 ए पूरी तरह से अलग स्थिति में उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्ति पर विचार करता है। धारा 115 के खंड (ए) से (सी) के दायरे में पुनरीक्षण शक्तियों के अधिकार का सिद्धांत नियमों के नियम 36 ए में प्रावधानित की गई पुनरीक्षण शक्तियों पर कठोरता से लागू नहीं होता है।

अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह तर्क दिया गया कि उपायुक्त व सहायक उपायुक्त को मध्यस्थता पंचाट को न्यायालय का नियम बनाने हेतु मध्यस्थता पंचाट सुने जाने अथवा सहायक उपायुक्त के निर्णयों की अपील सहायक उपायुक्त द्वारा सुने जाने का अधिकार दिया जा सकता है परंतु ऐसी वैधानिक शक्तियां जो उन्हें प्रदत्त की गई हैं, के ऐसे प्रयोग के लिए उन्हें धारा 115 सीपीसी के तहत दीवानी न्यायालय अथवा मध्यस्थता अधिनियम की धारा 2 (सी) के तहत परिभाषित न्यायालय नहीं माना जा सकता है। ऐसे में खंडपीठ ने इलाहाबाद उच्च

न्यायालय के निर्णय (एआईआर 1945 इलाहाबाद 146) व पेप्सू उच्च न्यायालय के निर्णय (एआईआर 1951 पेप्सू 115) जो नियम 36ए के तहत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता के प्रश्न के निर्धारण के लिए प्राधिकारी नहीं है। अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क दिया कि नियम 36ए के तहत पुनरीक्षण आवेदन अधिनियम की धारा 39 के तहत पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध चलने योग्य नहीं है। इसलिए आक्षेपित आदेश को रद्द कर दिया जाना चाहिए और उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित पुनरीक्षण आवेदन को तत्काल खारिज कर दिया जाना चाहिए।

प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान अतिरिक्त सॉलिसिटर जनरल श्री रेड्डी ने प्रस्तुत किया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 ने स्पष्ट रूप से अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश के खिलाफ दूसरी अपील पर रोक लगा दी है। दूसरी अपील पर रोक वास्तव में उच्च न्यायालय के पर्यवेक्षी क्षेत्राधिकार पर रोक नहीं लगाती है। उन्होंने उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग प्रस्तुत किया है, भले ही एक वैधानिक अपील स्पष्ट रूप से वर्जित हो, जिसे विभिन्न उच्च न्यायालयों और इस न्यायालय द्वारा भी मान्यता दी गई है। ऐसे विवाद के समर्थन में, श्री रेड्डी ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय (एआईआर 1945 इलाहाबाद 146) और पेप्सू उच्च न्यायालय (इलाहाबाद 1951 पेप्सू 115) के निर्णयों का उल्लेख किया है क्योंकि उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय पर भरोसा

किया है।

श्री रेड्डी ने छगनलाल बनाम नगर निगम, इंदौर के निर्णय को भी संदर्भित किया। प्रकरण में नगर निगम आयुक्तों के फैसले के खिलाफ अपील में अपीलीय प्राधिकारी (जिला न्यायालय) द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध धारा 115 सीपीसी के तहत प्रस्तुत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता के बिंदु पर विचार किया गया था। हालांकि मध्यप्रदेश निगर अधिनियम की धारा 149 में यह प्रावधान है कि नगर निगम आयुक्तों के निर्णय के विरुद्ध अपील पर अपीलीय प्राधिकारी (जिला न्यायालय) द्वारा पारित आदेश अंतिम होगा। इस न्यायालय द्वारा यह माना गया है कि जिला न्यायालय उच्च न्यायालय के अधीनस्थ हैं, उच्च न्यायालय जिला न्यायालय के ऐसे आदेश के खिलाफ पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग कर सकता है व ऐसे आदेश की अंतिमता उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का अपसारण नहीं कर देता है।

श्री रेड्डी ने यह प्रस्तुत किया कि धारा 39 (2) केवल इंगित करती है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश की कोई द्वितीय अपील दायर नहीं की जा सकती है। द्वितीय अपील पर ऐसे स्पष्ट प्रतिबंध के कारण, मोहिन्दर सप्लाई कंपनी (सुप्रा) इस न्यायालय ने माना है कि द्वितीय अपील की ऐसी रोक दूसरी अपील के किसी भी रूप पर और यहां तक कि लेटर्स पेटेंट के तहत अपील के माध्यम पर भी लागू

होगी। वर्तमान प्रकरण में, नियमों के नियम 31ए के तहत पुनरीक्षण आवेदन किया गया है।

श्री रेड्डी ने प्रस्तुत किया है कि संयुक्त खासी हिल्स जिले और जेनिटिया हिल्स जिले में प्रचलित सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखते हुए उक्त क्षेत्र में न्याय और पुलिस प्रशासन के लिए नियम बनाए गए थे। इसमें कोई विवाद नहीं है कि ऐसे नियम संबंधित क्षेत्र में लागू होते हैं। ऐसे नियम दीवानी और आपराधिक मामलों के समाधान के लिए मंच प्रदान करते हैं। नियमों में ऐसे प्रावधानों के मद्देनजर उपायुक्त के सहायक और उपायुक्त सिविल न्यायालयों की शक्तियों का प्रयोग करते हैं। उक्त क्षेत्रीय सीमाओं के भीतर सिविल अदालतों की शक्तियों का प्रयोग करने वाले ऐसे प्राधिकारियों को गौहाटी उच्च न्यायालय के अधीनस्थ सिविल अदालतें माना जाना चाहिए। इसलिए, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत उपायुक्त द्वारा दिए गए निर्णय के संबंध में उच्च न्यायालय के पास पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार है। चूंकि नियम 36ए विशेष रूप से उपायुक्त के अपीलीय निर्णय के खिलाफ उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण का प्रावधान करता है, इसलिए ऐसा पुनरीक्षण आवेदन किया गया है। लेकिन धारा 115 दीवानी प्रक्रिया संहिता के तहत उक्त पुनरीक्षण आवेदन पर भी विचार करने में कोई कठिनाई नहीं है।



श्री रेड्डी ने प्रस्तुत किया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 (2) के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष द्वितीय अपील पर प्रतिबंध, दीवानी न्यायालय के निर्णय के संबंध में पुनरीक्षण शक्तियों के प्रयोग पर प्रतिबंध लगाने का कार्य नहीं करता है। भले ही ऐसा निर्णय अपीलीय शक्ति का प्रयोग करते हुए किया गया हो। यह महत्वहीन है कि ऐसी पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग धारा 115 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत किया जाना है या किसी विशिष्ट वैधानिक प्रावधानों जिनके अंतर्गत उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन की अनुमति है, के तहत किया जाना है। श्री रेड्डी ने प्रस्तुत किया है कि इलाहाबाद और पेप्सू के उच्च न्यायालयों द्वारा और छगनलाल के मामले (सुप्रा) में इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित विधिक सिद्धांत कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 (2) के तहत द्वितीय अपील पर प्रतिबंध अथवा अपीलीय आदेश की अंतिमता उच्च न्यायालय के पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार को अपसारणित नहीं करती है तथा नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण आवेदन के लिए पूर्ण रूप से लागू होती है और यह तर्क है कि धारा 115 सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता के संबंध में निर्णयों का नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता को निर्णीत करने में कोई प्रयोज्यता नहीं है व कोई सार हना होने से इसे खारिज कर दिया जाना चाहिए।

श्री रेड्डी ने प्रस्तुत किया कि इलाहाबाद और पेप्सू के उच्च न्यायालय द्वारा तथा इस न्यायालय द्वारा छगनलाल के मामले में प्रतिपादित विधिक सिद्धांत कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 (2) के तहत द्वितीय अपील पर प्रतिबंध अथवा अपीलीय आदेश की अंतिमता उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण अधिकारिता को अपसारणित नहीं करती है, नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण आवेदन पर पूर्ण रूप से लागू होता है तथा यह तर्क कि धारा 115 सीपीसी के तहत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता के संबंध में निर्णय नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण याचिका की पोषणीयता निर्धारित करने हेतु लागू नहीं होते हैं। किसी सारवान तथ्य के अभाव में खारिज किए जाने योग्य है।

श्री रेड्डी ने आगे कहा कि यद्यपि नियम 36 ए में इस बात का कोई संकेत नहीं है कि उच्च न्यायालय द्वारा नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग कैसे और किस हद तक किया जाना है, न्यायिक निर्णय स्पष्ट है कि पुनरीक्षण शक्ति अपीलीय शक्ति के समव्यापी नहीं है। ऐसी शक्ति अपने अनुप्रयोग में काफी सीमित है। इस संबंध में, श्री रेड्डी ने हरि शंकर बनाम राव गिरधारी लाल (1962) सप्ल (1) एससीसी आर 933 के निर्णय को संदर्भित किया। उक्त निर्णय में, इस न्यायालय द्वारा दिल्ली और अजमेर किराया नियंत्रण अधिनियम की धारा 35(1) के तहत पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय की एकल पीठ

ने साक्ष्यों के पुनर्मूल्यांकन कर निर्णय पर पुनर्विचार किया और इस स्तर के पुनर्विचार पर विचारण न्यायाधीश के निर्णय की पुष्टि करते हुए अपीलीय प्राधिकारी के आक्षेपित निर्णय में हस्तक्षेप किया। इस न्यायालय ने उक्त मामले में बहुमत के फैसले से माना है कि अपील और पुनरीक्षण के बीच अंतर वास्तविक है। अपील का अधिकार विधि के साथ साथ तथ्य पर भी दोबारा सुनवाई का अधिकार प्रदान करता है, जब तक कि अपील का अधिकार प्रदान करने वाली विधि किसी तरह से सुनवाई को सीमित नहीं करती हो। इस न्यायालय द्वारा यह संकेत दिया गया कि पुनरीक्षण की शक्ति आम तौर पर एक वरिष्ठ न्यायालय को होती है ताककि वह स्वयं संतुष्ट हो सके कि किसी विशेष मामले का निर्णय विधि अनुसार किया गया है। उक्त किराया अधिनियम की धारा 35 में विधि अनुसार प्रयुक्त हुए वाक्यांश, इस न्यायालय के बहुमत के निर्णय के अनुसार, संपूर्ण निर्णय को संदर्भित करता है और इसे विधि की त्रुटियों या तथ्य सरलीकरण के बराबर नहीं माना जाता है। यह इंगित किया गया है कि उच्च न्यायालय यह देख सकता है कि न्याय देने में कोई गड़बड़ी नहीं हुई है और निर्णय उल्लिखित अर्थ में विधि अनुसार है। इस न्यायालय ने यह माना है कि किराया अधिनियम की धारा 35 के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग करते हुए, उच्च न्यायालय द्वारा साक्ष्य के मूल्य का पुनर्मूल्यांकन करना और निचली अदालतों द्वारा निकाले गए तथ्यों के निष्कर्षों को स्वयं के निष्कर्षों से प्रतिस्थापित करना उचित नहीं था। श्री रेड्डी ने प्रस्तुत

किया कि उच्च न्यायालय पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अपील की अदालत के रूप में कार्य नहीं करेगा बल्कि पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार के सीमित दायरे के भीतर अपीलीय आदेश की औचित्य पर विचार करेगा। इसलिए, उन्होंने प्रस्तुत किया है कि उच्च न्यायालय का आक्षेपित निर्णय न्यायसंगत और उचित होने के कारण इस न्यायालय द्वारा किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है और अपील खारिज कर दी जानी चाहिए।

प्रकरण के तथ्यों और परिस्थितियों और पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत किए गए तर्कों पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद, हमें यह प्रतीत होता है कि सहायक उपायुक्त शिलांग और उपायुक्त शिलांग को मेघालय के कुछ हिस्सों में सिविल अदालतों के रूप में कार्य करने का अधिकार क्षेत्र प्रदान किया गया है।

1972 के मेघालय अधिनियम संख्या 6 के तहत, नियम संपूर्ण संयुक्त खासी व जेनेटिया हिल्स जिलों पर लागू किए गए हैं। इसलिए, अपीलकर्ता ने सहायक उपायुक्त के न्यायालय में मध्यस्थता पंचाट दायार किया और निर्णय को न्यायालय का नियम बनाते हुए आदेश प्राप्त किया। प्रतिवादी संघ ने भी उपायुक्त के समक्ष मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपील प्रस्तुत कर, इसे अपीलीय कर इसे अपीलीय दीवानी न्यायालय के रूप में स्वीकार किया। यह पहले ही इंगित किया जा चुका है कि यह दर्शित करने के लिए हमारे समक्ष कोई सामग्री नहीं रखी गई है

कि उपायुक्त अथवा सहायक उपायुक्त को क्षेत्रीय सीमाओं के भीतर सामान्य रूप से दीवानी विवादों के निर्णय के लिए दीवानी न्यायालय की शक्तियाँ नहीं दी गई हैं परंतु उन्हें विशेष जनजातीय लोगों तक सीमित विशेष श्रेणी के दीवानी विवादों का निर्णय करने की अधिकारिता है। उपरोक्त परिस्थितियों में, ऐसा अपीलीय आदेश जो विशेष विधि के तहत गठित हो दीवानी न्यायालय जो उच्च न्यायालय के अधीनस्थ, है, द्वारा पारित किया गया है। उच्च न्यायालय के दीवानी प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार समाप्त नहीं होता है।

अपीलकर्ता भारत संघ ने उच्च न्यायालय की एकल पीठ के समक्ष नियम 36 ए के तहत एक पुनरीक्षण याचिका दायर की क्योंकि उपायुक्त के अपीलीय आदेश के विरुद्ध नियमों के तहत कोई अपील प्रदान नहीं की जाती है। भले ही नियमों के तहत उपायुक्त के ऐसे अपीलीय आदेश के विरुद्ध अपील दायर करने का प्रावधान था, ऐसी द्वितीय अपील, जो मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39(2) द्वारा स्पष्ट रूप से प्रतिबंधित है, अक्षम होती। मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में, नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण याचिका सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 की अनुरूपता में विचारित की जानी है। मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश पर आक्रमित करने हेतु नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्तियों की सीमित प्रयोज्यता को पढ़ा जाना चाहिए, अन्यथा नियम 36 ए

के तहत पुनरीक्षण शक्ति प्रतिरोधी भेदभाव को अवसर देगी। उदाहरणार्थ, मेघालय राज्य में जहां नियम लागू नहीं होते हैं, वहां मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश के विरुद्ध एक पक्षकार सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा 115 के तहत अपने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार में ही उच्च न्यायालय का रुख कर सकता है, लेकिन एक अन्य वादी जहां नियम लागू होते हैं, वहां मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत समान अपीलीय आदेश के विरुद्ध नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग में अधिक अधिकारों का लाभ उठाया जा सकता है। ऐसी स्थिति स्वीकार्य नहीं है। इसलिए ऐसे मामले में उच्च न्यायालय के नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत पुनरीक्षण शक्ति के अनुरूप किया जाना चाहिए।

हमारे विचार में, मध्यस्थता अधिनियम की धारा 39 के तहत पारित अपीलीय आदेश के विरुद्ध उच्च न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन पोषणीय है। मध्यस्थता अधिनियम में अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण याचिका दायर करने पर रोक लगाने का कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है। मध्यस्थता अधिनियम ने अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश से कोई भी द्वितीय अपील प्रस्तुत करने पर प्रतिबंध लगाता है। मध्यस्थता अधिनियम एक विशेष कानून है जिसका उक्त अधिनियम द्वारा शासित प्रकरणों से संबंधित अनुप्रयोग

सीमित है। इसलिए ऐसे विशेष क़ानून को उक्त क़ानून में दिए गए प्रावधान के अनुसार लागू होना चाहिए। यदि अधिनियम में उच्च न्यायालय द्वारा पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग के खिलाफ कोई स्पष्ट रोक नहीं है, संहिता अथवा किसी अन्य विधि के तहत उच्च न्यायालय का पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार मध्यस्थता अधिनियम के तहत समाप्त नहीं होगा, बशर्ते कि ऐसी पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग मध्यस्थता अधिनियम के प्रावधानों के प्रभाव से कम न करता हो।

यह भी कहा जा सकता है कि आर मेसिल एंड कंपनी लिमिटेड बनाम गौरी शंकर सारदा (1991 (2) एससीसी 548) में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि मध्यस्थता अधिनियम की धारा 41 में यह प्रावधान है कि सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधान अधिनियम के तहत न्यायालय के समक्ष सभी कार्यवाहियों पर लागू होंगे। चूँकि मध्यस्थता अधिनियम उक्त अधिनियम की धारा 34 के तहत आवेदन में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 23 की प्रयोज्यता को स्पष्ट रूप से नहीं हटाया है, ऐसे में सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश 23 के ऐसे प्रावधान लागू होंगे।

यह कहा जा सकता है कि भले ही कोई विशेष क़ानून स्पष्ट रूप से उस क़ानून के तहत पारित अपीलीय आदेश को अंतिम रूप देता हो, इस न्यायालय द्वारा हरि शंकर (सुप्रा) के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अंतिमता का ऐसा प्रावधान सिविल प्रक्रिया संहिता की धारा

115 के अंतर्गत उच्च न्यायालय की पुनरीक्षण शक्तियों को समाप्त नहीं कर देगा। मध्यस्थता अधिनियम में ऐसा कोई स्पष्ट प्रावधान नहीं है जो उक्त अधिनियम की धारा 39 के तहत अपीलीय आदेश को अंतिमता प्रदान करता हो। जैसा कि पहले ही इंगित किया गया है, धारा 39 की उपधारा (2) के तहत केवल धारा 39 के अंतर्गत पारित अपीलीय आदेश की द्वितीय अपील पर प्रतिबंध है। इसलिए, नियमों के नियम 36 ए के तहत पुनरीक्षण आवेदन की पोषणीयता को बरकरार रखने वाला उच्च न्यायालय का आक्षेपित आदेश उचित है और ऐसे निर्णय के खिलाफ किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। अतएव, यह अपील विफल हो जाती है और खर्च के संबंध में बिना किसी आदेश के खारिज की जाती है। चूंकि पुनरीक्षण आवेदन लंबे समय से लंबित है, इसलिए उच्च न्यायालय को पुनरीक्षण आवेदन को गुण-दोष के आधार पर यथाशीघ्र, परंतु इस आदेश के संसूचना की तिथि से चार महीने से अधिक नहीं, निपटाने का निर्देश दिया जाता है।

टीएनए

अपील खारिज



यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी सबा परवीन कागज़ी (आर०जे०एस०) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।